बुनियादी शिक्षा

प्रश्न और उत्तर

...ments of
...blicity,
... Bombay,
...mbay, 1.

पब्लिकेशन्स डिवीजन

बुनियादी शिक्षा

प्रश्न और उत्तर

पब्लिकेशन्स डिवीज़न
सूचना तथा प्रसार मंत्रालय
भारत सरकार

अक्तूबर, १९५५

मूल्य ३ आना

मुद्रक—एलबियन प्रेस कश्मीरी गेट, दिल्ली।

भूमिका

महात्मा गान्धी ने 'हरिजन', जुलाई १६३७, में एक लेख में लिखा— 'शिक्षा से मेरा यह तात्पर्य है कि इससे बालक और मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा का पूर्ण विकास हो।' यह वह चिनगारी थी जिससे अपने देश की शिक्षा-प्रणाली में एक महान् क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। गान्धी जी ने अपने कुछ विचारों को जनता के समक्ष प्रयोग के लिये रक्खा। इन विचारों के पीछे जनता के साथ कई दशकों से काम करने से उपलब्ध अनुभव था। ये विचार ऐसे थे कि इनके आधार पर भारतवर्ष की विशाल ग्रामीण जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये शिक्षा-पद्धति का निर्माण हो सकता था। गान्धी जी द्वारा परिकल्पित इस शिक्षा-पद्धति की पृष्ठ भूमि में उनका यह दृढ़ विश्वास था कि सच्ची शिक्षा केवल कार्य से ही मिल सकती है। सभी आधुनिक शिक्षाशास्त्री इस सिद्धान्त को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सही मानते हैं।

'हरिजन' में इस विषय पर गान्धी जी का लेख प्रकाशित होते ही वर्धा में एक छोटे सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसमें विभिन्न प्रान्तों के समाज-सेवकों, शिक्षा-शास्त्रियों तथा शिक्षा-मंत्रियों ने भाग लिया। डाक्टर ज़ाकिर हुसेन की अध्यक्षता में एक काम चलाऊ योजना तथा पाठ्यक्रम तैयार करने के लिये एक समिति बनाई गई। इस समिति का प्रतिवेदन बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा के नाम से प्रकाशित हुआ। इसकी प्रमुख सिफारिशें नीचे दी जाती हैं:

(१) सभी बालक और बालिकाओं को सात वर्ष तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा दी जाये।

(२) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो।

(३) शिक्षा किसी प्रकार की दस्तकारी या उत्पादक कार्य के इर्द गिर्द चालू रहे।

(४) शिक्षा इस अर्थ में आत्म-निर्भर होनी चाहिये कि उससे अध्यापकों का वेतन निकल आये।

इसके बाद शीघ्र ही एक अखिल भारतीय समिति 'हिन्दुस्तानी तालीमी संघ' के नाम से बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा के कार्यक्रम को सुसंगठित रूप से कार्यान्वित करने के उद्देश्य से बनाई गई। शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकारी मंडल ने शीघ्र ही वर्धा योजना के उत्तम गुणों को देखा और श्री बाल गंगाधर खेर की अध्यक्षता में इसकी संभावनाओं की जाँच के लिये एक समिति नियुक्त की। फलतः कई प्रचलित मिथ्या भ्रमों का निराकरण हो गया, और इस बात पर जोर दिया गया कि यह योजना शिक्षा सम्बन्धी है, उत्पादन सम्बन्धी नहीं। खेर समिति ने क्रियाशीलता के द्वारा शिक्षा के सिद्धान्त को पूर्णरूपेण स्वीकार किया। इसके सिफारिशें इस प्रकार थीं :

(१) बुनियादी शिक्षा की योजना का आरंभ पहले देहाती क्षेत्रों में किया जाये।

(२) अनिवार्य शिक्षा के लिये वय की अवधि ६ से १४ वर्ष तक होनी चाहिये, किन्तु पाँच वर्ष के बच्चों का भी प्रवेश हो सकेगा।

(३) बुनियादी विद्यालय के छात्र पाँचवीं श्रेणी के पश्चात् दूसरे प्रकार के विद्यालयों में जा सकेंगे, तथा

(४) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो।

इन्हीं खेर महोदय की अध्यक्षता में बुनियादी पद्धति और उच्च शिक्षा में सामञ्जस्य उत्पन्न करने के लिये एक अन्य समिति की नियुक्ति हुई। इन दोनों समितियों की सिफारिशों को शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार मंडल ने स्वीकार कर लिया तथा इसे भारतवर्ष के युद्धोत्तर शिक्षा विकास के प्रतिवेदन में सम्मिलित कर लिया। इस प्रतिवेदन का प्रकाशन १६४४ में हुआ। भारत सरकार तथा राज्य सरकारों ने इस प्रतिवेदन का अनुमोदन किया। वर्धा-योजना से इसमें भेद केवल यही था कि बुनियादी विद्यालयों की दस्तकारी से बुनियादी शिक्षा के व्यय की पूर्ति की आशा इसमें नहीं की गई थी।

भारतवर्ष जैसे दरिद्र देश के लिये बुनियादी शिक्षा बहुत ही व्यावहारिक तथा सब से कम खर्चवाली शिक्षा-पद्धति है। इसके अतिरिक्त इसमें वैयक्तिक गुणों के विकास की अन्तर्निहित शक्ति है, जिससे लोग अपने नागरिक अधिकार और कर्तव्य का पालन बुद्धिमत्ता से कर सकें। बुनियादी शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि है—दस्तकारी और उत्पादक कार्य से शिक्षा का विकास। इससे

विद्यालयों में लोकतांत्रिक प्रशासन की भावना को सब से अधिक प्रेरणा मिल सकेगी, और यदि विशेषज्ञ अध्यापक मार्ग दिखाएं तो यह नागरिक और सामाजिक गुणों के विकास का साधन बन सकती है। यह आशा की जाती थी कि इससे गान्धी जी के स्वप्न की—सहकारितामूलक नयी सामाजिक-व्यवस्था के निर्माण की—केवल पूर्ति ही न होगी, किन्तु साथ ही ऐसे नागरिक पैदा होंगे जिनसे समाज को बल मिल सके।

कार्यकेन्द्रित शिक्षा का अर्थ उदार शिक्षा के साथ-साथ व्यावसायिक दस्तकारी की शिक्षा नहीं है, किन्तु इसका यह तात्पर्य है कि किसी चुनी हुई दस्तकारी के द्वारा शिक्षा दी जाये जिनसे मानव जाति के प्रमुख कार्य और स्वार्थों का सुन्दर और स्वाभाविक समन्वय हो सके। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ है शिक्षा के लिये दस्तकारी में अंतर्निहित कार्य का अधिक से अधिक उपयोग। इससे संकल्प, मांसपेशी और हाथ तथा बुद्धि की एकाग्रता का पूर्ण सामञ्जस्य हो जाता है, और केवल साहित्य के प्रति पक्षपातयुक्त शिक्षा की अपेक्षा सर्वसम्मति से इन्हीं का सामञ्जस्य व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिये आवश्यक है। चूंकि प्राकृतिक परिस्थिति ही शिक्षा का माध्यम होगी, जैसा सभी ग्राम शिक्षा पद्धतियों में होना चाहिये, इसलिये इस योजना के क्रांतिकारी रूप में शीघ्र विकसित होने की संभावना है जिससे गाँवों के मानवीय उपादान का दृढ़ीकरण होगा, न कि अधः-पतन या विलय। इससे सब तरह के खर्च में कमी होगी और प्राचीन काल की सांस्कृतिक धारावाहिकता बनी रहेगी; जिससे इस पद्धति में शिक्षित बालक हमारी राष्ट्रीय संस्कृति और वैशिष्ट्य के सच्चे प्रतिनिधि बन सकेंगे।

यद्यपि बुनियादी शिक्षा को प्रायः सभी लोगों ने सिद्धान्त रूप में स्वीकार कर लिया है, तथापि कभी कभी कुछ लोग समय-समय इस पद्धति के कुछ पहलुओं के सम्बन्ध में सन्देह, आशंका और भ्रम फैलाते रहते हैं। यहाँ पर कुछ आपत्तियों का उत्तर देने का प्रयत्न किया गया है न कि बुनियादी शिक्षा की योजना सम्बन्धी दर्शन, विचारधारा और व्यावहारिकता की व्याख्या की जायेगी जो कि अन्य पूर्व प्रकाशनों में हो चुकी है।

प्रश्न १—बुनियादी शिक्षा शिशु को अत्यन्त कम उम्र में ही दस्तकारी की ओर लगा देती है। क्या इससे बालक को निश्चिन्त जीवन से वंचित कर उसके सहज विकास में बाधा नहीं दी जाती, क्योंकि सहज गुणों का निर्बाध विकास निश्चिन्त बाल्य जीवन से ही संभव है?

इस आशंका में यह मान लिया गया है कि दस्तकारी की शिक्षा बुद्धि-

हीन रूप में यंत्र के समान दी जायेगी और ऐसा करने का प्रधान उद्देश्य बालक का केवल संकुचित व्यावसायिक प्रशिक्षण होगा जिसमें उसके पूर्ण विकास का ध्यान न रक्खा जायेगा। यह आशंका एकदम निराधार है क्योंकि बुनियादी शिक्षा का यह वैशिष्ट्य और लक्ष्य है कि श्रम और अवकाश के तथा एक बड़ी हद तक काम और खेल के द्वन्द को दूर करे। इसमें केवल दस्तकारी को ही महत्त्व दिया जाता हो ऐसी बात नहीं, किन्तु उन प्रशस्त मार्गों पर जोर दिया जाता है जो शिशु के सहज कौतूहल के सामने खुल जाते हैं तथा उसकी व्यावहारिक क्रियाशीलता के लिये दिशा प्रदर्शित करते हैं। बुनियादी शिक्षा में इस कौतूहल का लाभ उठाया है और दस्तकारी का उचित विषयों के साथ समन्वय करके शिशु को इस प्रकार की शिक्षा दी जाती है, जिससे किसी प्रकार उसके मस्तिष्क पर बोझ न पड़े।

अच्छे बुनियादी विद्यालय में शिशु को इस बात का ध्यान भी नहीं होता कि मैं कोई दस्तकारी सीख रहा हूँ। वह समझता है कि दस्तकारी केवल एक प्रकार की क्रीड़ा है। बालक की शक्ति उत्पादक स्रोतों की ओर फेर दी जाती है इसका मतलब हरगिज़ यह नहीं है कि शिक्षा में आनन्द के तत्वों का विनाश हो रहा है। उलटे, इससे बालक को अपने व्यक्तित्व का विकास करने के लिये स्वतंत्रता का अच्छा वायुमण्डल मिलता है, जो उसे घर पर पुराने ढंग के किसी प्रारंभिक विद्यालय में नहीं मिलता। बात यह है कि उसके माँ बाप अपने कामों में व्यस्त रहते हैं, और उन्हें बच्चों की देख भाल करने का समय नहीं मिलता और न मिलने की आशा है। गूढ़ अर्थ में उत्तरदायित्व की चेतना का समुचित विकास स्वस्थ बाल्य काल के किसी प्रकार भी प्रतिकूल नहीं कहा जा सकता।

प्रश्न २—क्या बुनियादी शिक्षा से बाल मजदूरी का एक दूषित रूप में पुनः प्रारम्भ न होगा और इस प्रकार सरकार द्वारा बच्चों के शोषण का रास्ता खुल जायेगा और वे राज्य के नीति सम्बन्धी नियामक सिद्धान्तों के अनुसार जो निःशुल्क प्रारंभिक शिक्षा पाने का अधिकार है उससे वे वंचित न रह जायेंगे ?

सभी काम को श्रम के पर्याय में नहीं डाल सकते, यह भी गलत है कि स्वभावतः बालक काम करने से घृणा करता है। यदि देखा जाये तो उसकी चंचल प्रकृति काम करने को लालायित रहती है, और रटने से वह दूर भागता है। क्रियाहीन

पुस्तकी विद्या बौद्धिक क्रिया का एक ऐसा रूप है जिससे बालक की प्राकृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती। साधारणतः बालक को तब खुशी होती है, जब उसे तेजी से कुछ काम करने दिया जाता है। जब जबर्दस्ती काम कराया जाता है, तभी यह श्रम हो जाता है। जब बल या दण्ड का प्रयोग नहीं किया जाता, जैसा प्रत्येक अच्छे बुनियादी विद्यालय में होता है, और काम करने की अन्य परिस्थितियाँ संन्तोषजनक हैं, तो सम्भव है कि काम खेल का रूप धारण कर ले, और शिक्षा का एक परम शक्तिशाली साधन बन जाये।

शिक्षा के लिये दस्तकारी या शिल्प का उपयोग शिक्षा क्षेत्र में एक नयी कल्पना है, और इसी कारण इस सम्बन्ध में अनेक मिथ्या धारणाएँ और निर्मूल आशंकाएँ फैली हुई हैं। बुनियादी विद्यालय उस कारखाने की तरह कभी नहीं हैं जहाँ बाल श्रम का शोषण होता है। अच्छे बुनियादी विद्यालय में सबसे प्रथम इस बात का विशेष ध्यान रक्खा जाता है कि बच्चों के ऊपर कार्यभार अधिक न हो। पर यदि कोई अत्युत्साही शिक्षक बुनियादी शिक्षा के उत्पादन वाले पहेलू पर जोर देने की भूल करे तो भी ऐसी कई परिस्थितियाँ हैं जिनसे इस प्रवृत्ति की रोकथाम स्वयं हो जायेगी। प्रथम तो निरीक्षक अनवरत इसकी जाँच किया करते हैं। दूसरी बात यह है कि विद्यालय को बौद्धिक विकास की प्रगति का सूचक सन्तोषजनक रिकार्ड रखना पड़ता है, अतः दस्तकारी के द्वारा शिक्षण-सिद्धान्त में त्रुटियों और कुरीतियों का सन्तोपजनक निराकरण हो सकता है। इस सम्बन्ध में इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिये कि बुनियादी शिक्षा और समाज में चोली दामन का सम्बन्ध विकसित होगा और समाज के लोगों को यदि किसी प्रकार भी शोषण का पता चल गया तो वे टुकुर टुकुर ताकते न रहेंगे।

वर्धा योजना के मूल पाठ्यक्रम के अनुसार प्रति कार्य-दिन में जो साढ़े पाँच घंटे का होता है, तीन घंटे २० मिनट दस्तकारी के लिये निर्धारित थे। यह समय केवल शारीरिक कार्य करने के लिये नियत नहीं था, बल्कि उसमें शिल्पों के साथ सम्बन्ध अन्य विषयों के लिये भी समय होता है। एक अच्छे बुनियादी विद्यालय में दस्तकारी में केवल शारीरिक परिश्रम ही नहीं उससे सम्बद्ध और बौद्धिक कार्य भी आते हैं।

बुनियादी विद्यालय का विशेषज्ञ अध्यापक अपने मनोजगत् में लक्ष्य और कार्य का सामञ्जस्य रखता है जिससे कि बालक द्वारा किये हुए कार्य का भौतिक

मूल्य या बालक द्वारा तैयार की हुई वस्तुएँ ही शिक्षा पद्धति में सर्वोपरि रूप न धारण कर लें। जैसा कि गान्धी जी ने कहा कि तकली उदाहरण के लिये एक अत्यन्त सुन्दर खिलौना है। उत्पादक होने से ही इसके खिलौना होने में बट्टा न लग जायेगा।

बालक राज्य से जो कुछ पाते हैं, यदि वे उसका कुछ अंश राज्य को वापस कर दें, तो इसका यह अर्थ नहीं होता कि उनका शोषण किया जा रहा है। बुनियादी शिक्षा में कुछ अंशों तक अपने पैरों पर खड़ा होने की क्षमता है, उससे इसकी शिक्षण-सम्बन्धी महत्ता ही नहीं बढ़ती, बल्कि आगे चालू रखने के लिये भी मार्ग सुगम हो जाता है जिससे कोई भी बालक शिक्षा से वंचित न रह जाये। बुनियादी शिक्षा सम्बन्धी योजना के अनुसार राज्य निम्न वस्तुएँ देती है—भूमि, विद्यालय-भवन, फर्नीचर, पुस्तक, मानचित्र, औजार तथा अन्य सामग्रियाँ। इससे सिवा राज्य आंशिक रूप से बच्चों को नूतन न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था के लिये तैयार करने में भी सहायता देती है, जिससे अन्ततोगत्वा उनका भला हो।

प्रश्न ३—क्या शिक्षा दस्तकारी-केन्द्रित होने से साहित्यिक और शास्त्रीय शिक्षण में बाधा न पड़ेगी ?

लोग प्रायः भूल से साक्षरता को शिक्षा समझ लेते हैं, किन्तु वास्तव में यह शिक्षा का केवल एक साधन मात्र है। फिर भी बुनियादी शिक्षा साक्षरता की अवज्ञा नहीं करती, हां इसमें साक्षरता का प्रारम्भ इस प्रकार किया जाता है कि जो कुछ भी सीखा जाये, वह कार्य द्वारा प्रथम बार ही सीख लिया जाये, और इस बात का ध्यान रखा जाता है कि शिक्षार्थी फिर से निरक्षर न होने पाये। गान्धी जी की अपनी शिक्षा योजना में साक्षरता अवश्य ही आती थी। वे कहते हैं—"लिखने या चित्र बनाने के पहले बालक हाथ से औजार उठायेगा, फिर आँखों से जैसा जीवन की अन्य वस्तुओं को जानने लगता है अक्षर और अक्षरों के चित्र पढ़ेगा। कानों से वस्तुओं के नाम और वाक्यों का अर्थ सुनेगा। अतः मेरे विद्यालय के बच्चे लिखने की तुलना में जल्दी पढ़ना सीख लेंगे।"

यदि शास्त्रीय शिक्षा का अर्थ असम्बद्ध बातों से बच्चों की स्मरण शक्ति पर केवल बोझ डालना है, तो बुनियादी शिक्षा का ऐसी शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता। किन्तु यदि शास्त्रीय शिक्षा को यथार्थ अर्थ में लिया

जाये तो व्यावहारिक कार्य और इसमें कोई अन्तर नहीं पड़ता। बुनियादी विद्यालय में दस्तकारी यांत्रिक क्रिया मात्र नहीं है किन्तु इसके साथ सम्बद्ध मौखिक कार्य, वाक्य शैली तथा चित्रांकन भी इसके अन्तर्गत आ जाते हैं। गान्धी जी कहते थे तकली की सहायता से युक्लिद का नाम लिये बिना ही बच्चों को वृत्त सम्बन्धी सभी बातें आसानी से सिखलायी जा सकती हैं। कताई का उदाहरण देकर उन्होंने यह सिद्ध किया कि किस प्रकार इसका सम्बन्ध गणित, इतिहास, भूगोल और अर्थशास्त्र से जोड़ा जा सकता है, और इस कारण इन विषयों की शिक्षा पहले की अपेक्षा कितनी अनुप्रेरणादायक रीति से दी जा सकती है। यही क्रियात्मक शिक्षा है। बुनियादी विद्यालय का समझदार शिक्षक प्रत्येक कार्यक्रम क्यों और कैसे होता है यह जानने के लिये बालकों की स्वाभाविक प्रवृत्ति को जागृत करता है जिससे उनके चित्त में वैज्ञानिक मनोवृत्ति का विकास हो और अन्य विषयों को जानने की उनमें प्रवृत्ति हो जो उन्हें यथासमय सिखलायी जा सके जब वे इन विषयों को ग्रहण करने के योग्य हो जायें। मूल योजना के प्रकाशित हो जाने के बाद विशेषतः बुनियादी शिक्षकों ने परस्पर सम्बद्ध पाठों की योजना इस प्रकार तैयार की है कि दस्तकारी और शास्त्रीय शिक्षा में कहीं भी किसी प्रकर विरोध न होकर दोनों का सुन्दर सामञ्जस्य स्थापित हो।

प्रश्न ४—दस्तकारी से सम्बद्ध रूप में इतिहास, विज्ञान और गणित इत्यादि विषय किस प्रकार सिखलाये जा सकते हैं ?

परस्पर सम्बन्ध स्थापन के सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप दिये बिना बुनियादी शिक्षा सफल नहीं हो सकती। शिल्प या दस्तकारी में प्राकृतिक और सामाजिक परिस्थितियों का सहज सम्मिश्रण हो जाता है। मनुष्य दस्तकारी से ही प्रकृति के कच्चे माल से मानव समाज के लिये उपयुक्त वस्तु तैयार कर देता है। मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के सिलसिले में जो ज्ञान प्राप्त किया, उसी की शाखाएँ विभिन्न विषय कहलाती हैं। अतः कताई के द्वारा इतिहास और भूगोल की शिक्षा को महज़ खींचातानी नहीं कहा जा सकता, यद्यपि पहली दृष्टि में ऐसा ही मालूम होता है। कपास कहाँ पैदा होता है, कपास के कितने प्रकार होते हैं, मनुष्य की वेशभूषा की उन्नति किस प्रकार हुई, ऐतिहासिक और राजनीतिक परिवर्तन का वेशभूषा पर क्या क्या प्रभाव पड़ा, इन कामों का सम्बन्ध यदि हम कताई से स्थापित करें तो बालकों को ज्ञान से सीधा सम्बन्ध ज्ञात होगा जैसा कि पाठ्यपुस्तकों के शुष्क ज्ञान से नहीं हो सकता। यदि

बच्चे अपनी पूनियाँ गिनना सीख जायें, अपने काते हुए सूत को मापना सीख लें और कल की अपेक्षा आज के अपने तैयार माल की तुलना करना सीख लें, तो वे अंकगणित के मूल तत्त्व को शुद्धरूप में सीख जाते हैं, जो वे केवल ढाँचे में लगे हुए रंगीन दानों से नहीं सीख सकते। स्वभाव से ही कुछ शिल्प अन्य विद्यालयों की अपेक्षा बुनियादी विद्यालय के लिये अधिक उपयुक्त है, अतः उनकी शिक्षण संभावनाओं के प्राचुर्य को ध्यान में रखकर ही शिक्षा के माध्यम के लिये उन्हें चुना जाता है।

किसी भी दस्तकारी से मातृभाषा की शिक्षा का सम्बन्ध आसानी से जोड़ा जा सकता है। किसी भी भाषा को सीखने के लिये शिक्षार्थी पहले वस्तुओं और क्रियाओं के शब्दों से आरम्भ करता है और दस्तकारी में तो सारा शब्द भण्डार ही वस्तुओं और प्रक्रियाओं से सम्बद्ध है। बच्चों के लिये उन शब्दों के उच्चारण और स्वरूप का महत्त्व अधिक है जिनसे किसी वस्तु या क्रिया का बोध होता है जिसे वह स्वयं काम में लाता है या काम कर रहा है।

परस्पर सम्बन्ध से हमें अपने परिपार्श्व का ज्ञान स्वाभाविक रूप में हो जाता है। व्यावहारिक ज्ञान के साथ शिक्षा-क्रम का सम्बन्ध होने से उत्साह और आकर्षण की ओर वृद्धि होती है और ऐसी शिक्षा बच्चों के लिये विशेष महत्त्व रखती है।

साथ ही यह बात भी स्मरण रहे कि दस्तकारी के सिवा बुनियादी पद्धति में दो अन्य स्रोत भी हैं–प्राकृतिक और सामाजिक परिस्थितियाँ; जिनके इर्द-गिर्द पारस्परिक सम्बन्ध स्थापन का सिद्धान्त कार्य कर सकता है। बुनियादी विद्यालय का शिक्षक सरलता से अपने विद्यार्थियों में प्राकृतिक घटनाओं जैसे वर्षा, वज्रपात बिजली तथा ग्रहनक्षत्रों के आवागमन के सम्बन्ध में उत्सुकता और निरीक्षण शक्ति का विकास कर सकता है। अतः इनके सम्बन्ध से भूगोल और विज्ञान का पाठन आसानी से हो जायेगा। स्थानीय इतिहास की शिक्षा के लिये उन ध्वंसावशेषों और मीनारों आदि को माध्यम बनाया जा सकता है जिन्हें बालक प्रायः प्रतिदिन देखता है।

बालकों के सामाजिक परिपार्श्व में अनेक उत्सव, त्यौहार और रीति रिवाज आते हैं। इस प्रकार की सामाजिक अनुभूतियों के अध्ययन से शिक्षा देना ही बुनियादी पद्धति की एक विशेषता है, और निपुण शिक्षक जानता है कि सामाजिक परिपार्श्व से सम्बन्ध जोड़ने से विषयों का क्षेत्र प्रायः अनन्त हो जाता है।

काव्य और सौन्दर्यशास्त्र इत्यादि विषयों की शिक्षा के सम्बन्ध में कभी भी दावा नहीं किया गया है कि दस्तकारी के द्वारा इनकी शिक्षा सन्तोषजनक रूप में दी जा सकती है किन्तु उपर्युक्त दोनों स्रोतों से सम्बन्ध स्थापित करके और थोड़ी कल्पनाशीलता से बालकों में सौन्दर्य के प्रति अभिरुचि पैदा की जा सकती है। बुनियादी शिक्षा पद्धति में साहित्य की शिक्षा का भी आयोजन है। ध्यान रहे, यद्यपि इस पद्धति में परस्परसम्बद्ध कार्यों का संमिश्रण है, यह अन्य शिक्षा पद्धति को, जहाँ समुचित पाठव्यवस्था की आवश्यकता है, विवेक-शून्य होकर ताक पर नहीं रख देती।

प्रश्न ५—मान लिया कि बुनियादी शिक्षा का ध्येय बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगपूर्ण विकास है, किन्तु अध्यापक के पास बालक की उन्नति, आवश्यकता और विशेष योग्यता को जाँचने के लिये क्या साधन होंगे ?

ज्यों-ज्यों बालक की आँख और हाथ सध जाते हैं, त्यों-त्यों उसे प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में एकाग्रता, और रचनात्मक और सृजनात्मक कल्पना का प्रशिक्षण मिलता रहता है, तथा वह निर्णय करने की शक्ति भी पाता है।

किसी भी ऐसी शिक्षा-पद्धति में जिसका लक्ष्य बालक का सर्वांगपूर्ण विकास है, उसकी संभावित उपार्जन क्षमता से ही इस बात का निर्णय न होगा कि पद्धति से उसको कहाँ तक लाभ पहुँचा। परीक्षावाली प्राचीन पद्धति भी उसकी प्रगति के ठीक मूल्यांकन में सहायक नहीं हो सकती।

बुनियादी विद्यालय के विभिन्न कार्यों के द्वारा निपुण अध्यापक को अपने छात्रों के मूल्यांकन का प्रचुर अवसर मिलेगा। कार्यों के आयोजन और सम्पादन में हाथ बँटाते रहने के कारण बच्चों से यह आशा की जाती है कि उनमें सहयोग का अभ्यास बढ़ेगा और उन्हें नेतृत्व की प्रारंभिक शिक्षा मिलेगी। जीवन-क्षेत्र में इस शिक्षा पद्धति से बालकों से यह आशा की जाती है कि वे प्रत्येक क्षेत्र में अपने पैरों पर खड़े होंगे और स्वच्छ, स्वस्थ और सांस्कृतिक जीवन व्यतीत करेंगे तथा जीवन की सामाजिक और नैतिक गुत्थियों को समझ सकेंगे।

अतः साहित्यपरक शिक्षा-पद्धति की अपेक्षा हमें उन्नति के मूल्यांकन के लिये और गहराई में जाना होगा तथा विशेष कल्पनाशीलता से काम लेना होगा। बालक की उन्नति के मूल्यांकन के लिये अध्यापक निम्न बातों का ध्यान रखेगा—यथा—वैयक्तिक रिकार्ड, नोटबुक, योजना बनाकर कार्य करने की शक्ति, बौद्धिक विकास, वेश, आदतें, कला-नैपुण्य, और सामाजिक-परिपार्श्व।

इनके सिवा छात्र की नियमित उपस्थिति, कार्यकुशलता, आत्मनिर्भरता और वैज्ञानिक मनोवृत्ति के विकास का भी ध्यान रखना होगा तथा उसके नागरिक गुणों की और जन सेवा के आदर्शों की परीक्षा लेनी होगी। फिर भी अन्ततोगत्वा अन्तिम परीक्षा तो यह है कि व्यावहारिक जीवन में छात्र आत्म-मूल्यांकन करके किस प्रकार चलता है; सही ढंग का शिक्षक इस बात का ध्यान रक्खेगा कि विद्यार्थी क्रमशः इसके योग्य बन जाय।

प्रश्न ६—क्या आर्थिक आत्मभरितता पर बल देने से बालकों के शिक्षण सम्बन्धी हितों में विघ्न न पड़ेगा यद्यपि इसका घोषित ध्येय बालकों को लाभ पहुँचाना है ?

जबसे गान्धी जी ने बुनियादी शिक्षा पर जोर दिया तभी से इस पर विवाद चल रहे हैं। वे कहते थे कि स्वावलम्बन ही इसकी वास्तविकता की अग्नि-परीक्षा है। इससे उनका तात्पर्य यह था कि स्वावलम्बन इस तथ्य का एक तर्कसंगत उपसिद्धान्त हो जायेगा कि छात्र ने अपने सभी वृत्तियों का समुचित प्रयोग करना सीख लिया है। आत्मभरितता के इस सिद्धान्त में केवल आर्थिक क्षेत्र में ही नहीं किन्तु सामाजिक और नैतिक क्षेत्र में भी आत्मनिर्भरता के विचार सन्निहित हैं।

पहले-पहल जब बुनियादी शिक्षा का प्रवर्तन हुआ, तो गान्धी जी ने यह अनुभव किया कि जब तक बुनियादी शिक्षा में कम से कम आंशिक रूप में आत्मभरितता प्राप्त न होगी, तब तक भारतवर्ष ऐसे दरिद्र देसश में इका प्रचार जन पैमाने पर न हो सकेगा। शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार मण्डल ने अपने प्रतिवेदन में बुनियादी शिक्षा के आर्थिक पहलुओं पर व्यापक रूप से विचार किया, उससे पता चलता है कि गान्धी जी की आशंकाएँ निर्मूल न थीं। जब तक देश की समृद्धि द्रुत औद्योगीकरण से (जिसे गान्धी जी पसन्द नहीं करते थे) कई गुनी न बढ़ जाये, तब तक सार्वजनिक रूप से राष्ट्रीय शिक्षा का प्रचार करने के लिये आवश्यक साधनों की प्राप्ति असम्भव है।

भारत सरकार ने वर्धा योजना को अक्षरशः स्वीकार न किया किन्तु शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार मण्डल की सिफारिशों को प्रायः स्वीकार कर लिया। इस समिति ने आर्थिक आत्मनिर्भरता पर ही बहुत कम बल दिया था।

चाहे कुछ भी हो, आत्मभरितता का सिद्धान्त विद्यार्थियों में उत्तरदायित्व की वांछित भावना भरता है, न कि उनके शिक्षण कल्याण में विघ्न डालता है, आत्मभरितता के विचार का स्वागत करने का एक सही मनोवैज्ञानिक हेतु यह

भी है कि इससे विद्यार्थी और शिक्षक के कामों में पूर्णता और निपुणता आवेगी और समय तथा साधन का सावधानी के साथ सदुपयोग हो सकेगा।

प्रश्न ७—प्रायः देखा जाता है कि बुनियादी विद्यालयों की पैदा की हुई अनेक वस्तुएँ नहीं बिक पातीं, क्या बुनियादी शिक्षा अपव्ययमूलक और आर्थिक दृष्टि से गलत नहीं है ?

यदि तात्कालिक द्रुत वित्तीय-लाभ की दृष्टि से बुनियादी शिक्षा की जाँच की जाये, तो प्रारम्भ में अवश्य ही व्यय को देखते हुए कुछ हानि होगी, किन्तु अनुभवी अध्यापक इस बात का ध्यान रक्खेगा कि कम से कम अपव्यय हो और विद्यार्थियों को शिक्षा भी मिल जाये। यह सत्य है कि मशीनों द्वारा बुनी हुई वस्तुओं की अपेक्षा बुनियादी विद्यालय में प्रस्तुत वस्तु अन्य दस्तकारी पदार्थों की तरह अधिक महंगी पड़ेंगी, किन्तु इनका विक्रय इतना कठिन नहीं होना चाहिये क्योंकि राष्ट्रीय नीति के अनुसार अन्य दस्तकारियों के विक्रय को प्रोत्साहन मिल रहा है। सच तो यह है कि यह आशा की जाती है कि इन विद्यालयों द्वारा उत्पादित अनेक वस्तुओं को समुचित मूल्य पर अध्यापक, छात्र और स्थानीय लोग खरीद लेंगे।

यह देखा गया है कि पाठ्यक्रम के प्रथम दो तीन वर्षों में जो घाटा होता है उसकी पूर्ति बाद के दो तीन वर्षों में करना सम्भव है। बुनियादी विद्यालयों द्वारा उत्पादित कपड़ों को बेचने की समस्या पैदा ही नहीं होती है। हाँ, प्रारम्भिक दशा में बुने हुए कुछ मोटे कपड़े भले ही न बिक सकें। कुछ विद्यालय के मंडलों ने अपने काम के लिये विद्यालय में ही निर्मित वस्तुओं के क्रय का उदाहरण रखा है। अनेक राज्यों में राज्य सरकारों द्वारा निर्दिष्ट वस्तुओं को ही तैयार करने का प्रयत्न किया गया है। यदि विशाल दृष्टिकोण से विचार करें, तो स्पष्ट हो जायेगा कि बुनियादी शिक्षा केवल अपचय-मूलक नहीं है बल्कि यह अपचय से बचाती है।

गान्धी जी कहते थे कि "प्रारम्भिक शिक्षा पर जो भी धन खर्च होता है, सब नष्ट हो जाता है, क्योंकि बालक जो थोड़ा बहुत सीखता भी है, वह सब शीघ्र ही भूल जाता है, और ग्रामीण या नागरिक जीवन के लिये उसका कुछ भी मूल्य नहीं रह जाता।" प्राचीन शिक्षा पद्धति में बालकों को जो कुछ भी सिखलाया जाता है, उससे गाँव को कोई लाभ नहीं होता क्योंकि गांवों के

बालक शिक्षा पाने के बाद गाँवों के लिये खो जाते हैं। उनकी शिक्षा का उनके दैनिक कर्म में किसी प्रकार का उपयोग नहीं हो पाता। वे शहरों में पहुँचते हैं, और प्रायेण समाज पर भारस्वरूप हो जाते हैं। अतः पढ़ाई के साथ यदि उनकी उत्पादन योग्यता भी बढ़ती जाये, तो इस प्रकार की शिक्षा में धन लगाना निःसन्देह लाभकारी है। अतः बुनियादी शिक्षा से धन का अपचय और उससे भी दुःखकर मनुष्य के व्यक्तित्व का भयंकर अपव्यय दोनों बच जाते हैं।

फिर भी स्मरण रहे कि बुनियादी शिक्षा की योजना मुख्यतः शिक्षा की योजना है न कि उत्पादन की। इसलिये प्रत्येक विवेकशील व्यक्ति इस प्रश्न को अप्रासंगिक ही समझेगा। यह सत्य है कि जन पैमाने पर शिक्षा की किसी भी योजना के लिये वित्त प्राप्त करने में व्यावहारिक कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं, किन्तु इन बाधाओं के कारण हमें यह भूल न जाना चाहिये कि यदि हमें भारतवर्ष में पहले से उच्चतर प्रकार के स्त्री और पुरुषों को तैयार करना है, तो इसके लिये हमें दूरदर्शिता से धन लगाना ही पड़ेगा।

प्रश्न ८—क्या बुनियादी शिक्षा के कारण जो बालक जिस परिस्थिति में पैदा हुआ है, वह उसी में फँसा नहीं रह जायेगा और वह व्यवसाय की स्वतन्त्रता और अवसर की समानता पाने से वंचित न रह जायेगा ?

जो शिक्षा बालक की परिस्थिति का ध्यान लेकर चलती है, वह एकांगी रहने के लिये बाध्य है। बुनियादी शिक्षा बालक को उसकी परिस्थिति में बाँधती नहीं है। यह केवल उस परिस्थिति का प्रयोग उसकी शिक्षा के हित में करती है, जिससे इसकी पृष्ठभूमि का आश्रय लेकर बालक अच्छी तरह शिक्षा प्राप्त करे। बात यह है कि यह पृष्ठभूमि बालक के लिये यथार्थ है। गान्धी जी के शब्दों में अधिक न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना है जहाँ धनियों और निर्धनों के बीच अस्वाभाविक अन्तर न हो, और हर एक को जीवन निर्वाह के लिए पारिश्रमिक तथा स्वतन्त्रता का अधिकार प्राप्त हो। क्रियाहीन शिक्षा से बालक के अन्दर समस्याओं को सुलझाने की योग्यता नहीं आ सकती जो जीवन की यथार्थ और वैयक्तिक समस्याओं का सामना करते हुए शिक्षा प्राप्त करते रहने से आती है।

इन कलाओं को केवल सीखने से ही बालक पेशेदार कातनेवाले या

जुलाहे नहीं हो जायेंगे। ये कलायें इन्हें व्यावहारिक होना सिखलाती हैं। इससे उन्हें दिमाग के साथ-साथ अंगुलियों को भी चलाने की शिक्षा मिलती है, जिससे बाद को चाहे जो उद्यम भी अपनाना चाहे उसके लिये वे अच्छी तरह से तैयार हो जाते हैं।

शिक्षा की आधुनिक पद्धति में अंग्रेजी तथा संकुचित किस्म के शास्त्रीय ज्ञान पर बहुत अधिक बल दिया जाता है, अतः असंख्य अनपढ़ और उच्च-शिक्षित अल्पसंख्यकों के बीच एक खाई तैयार हो गयी है। इस शिक्षा से ऐसे लोग उत्पन्न हुए जो शारीरिक श्रम को हेय दृष्टि से देखते हैं। बुनियादी शिक्षा में सामाजिक न्याय अन्तर्निहित है, क्योंकि जो बुराइयाँ समाज के लिये सब तरह से घातक हैं, इसका लक्ष्य उन पर विजय पाना है।

यह सत्य है कि सबसे पहले खास कर गाँवों के लिये ही बुनियादी शिक्षा की योजना तैयार की गयी थी। किन्तु जब भारत सरकार ने इस योजना को स्वीकार किया तो, उनका ध्येय था कि इसका प्रचार गाँव और शहर के विद्यालयों में समान रूप से किया जाय। बुनियादी शिक्षा के मुख्य सिद्धान्त को नगर के विद्यालयों में भी बिना किसी दिक्कत के व्यवहार में ला सकते हैं। दस्तकारी की व्यवस्था केवल गौण है। इसका यह अर्थ कभी भी नहीं है कि अनिच्छा होने पर भी बालक को इस व्यवसाय को करने के लिये बाध्य किया जायेगा। अतः कोई भी कारण नहीं है कि नगरों के बालक भी बुनियादी शिक्षा के लाभों से वंचित रहें।

बुनियादी शिक्षा को हम किसी प्रकार भी किसी विशेष वर्ग या श्रेणी की शिक्षा नहीं कह सकते। यह बिना भेद भाव के राष्ट्र के सभी बच्चों के लिये है। इसे लोकतान्त्रिक सामाजिक शिक्षा शैली कह सकते हैं क्योंकि समाज-सेवा और शारीरिक श्रम के सिद्धान्त पर बल देकर यह विशेषाधिकारों की जड़ ही खोद डालता है।

प्रश्न ६—बुनियादी शिक्षा और माध्यमिक तथा विश्वविद्यालय की शिक्षा में समुचित समन्वय का अभाव है। क्या इस दशा में बुनियादी शिक्षा को व्यापक बनाने से शिक्षा पद्धति में घोर विरोध पैदा न होगा?

गान्धी जी बुनियादी शिक्षा को केवल प्रारम्भिक शिक्षा का स्थान ही

नहीं दिलाना चाहते थे वे इसके द्वारा सम्पूर्ण शिक्षा पद्धति का पुन-निर्माण करने का विचार रखते थे। वे कहते थे "मैं विद्यालयों तथा कालेजों की शिक्षा में क्रान्ति करके राष्ट्रीय आवश्यकताओं से इन का नाता जोड़ूंगा" माध्यमिक शिक्षा उनके लिये रोड़ा थी क्योंकि जिस बात को बच्चे मातृभाषा में शीघ्र सीख सकते हैं, उसे विदेशी भाषा द्वारा सात वर्ष में सीखना पड़ता है।

इसके सिवा माध्यमिक शिक्षा के अन्य दोष भी स्पष्ट हैं—जैसे इसका व्यावसायिक उद्देश्य बहुत ही संकुचित है तथा इसने शारीरिक श्रम के प्रति एक प्रकार से घृणा पैदा कर दी है। इससे यह मिथ्या भावना उत्पन्न होती है कि केवल सामान्य अध्ययन से ही संस्कृति का सम्बन्ध हो सकता है न कि व्याव-हारिक विषयों से या उत्पादक कार्यों से। अतः जो शिक्षा हमारे राष्ट्रीय जीवन के अभ्युत्थान में हाथ बँटाने में सब प्रकार से असफल रही, उसे अन्ततोगत्वा उपयोगी सिद्ध होने वाली शिक्षा को स्थान देना होगा, चाहे ऐसा करते हुए व्यावहारिक कठिनाइयाँ भले ही हों।

आरम्भ में बुनियादी शिक्षा केवल विशेष वय के बालकों के लिये सीमित थी। इसका कारण यह था कि हममें यथेष्ट साधनों के अभाव में सभी स्तरों पर इसे एक साथ ही आरम्भ करने की क्षमता न थी। कहीं पर तो श्रीगणेश करना ही था। अतः यह स्वाभाविक है कि जहाँ इसकी घोर आवश्यकता थी, और जहाँ सफलता की विशेष सम्भावना थी, वहीं इसका श्रीगणेश हुआ। उच्च शिक्षा के साथ इसके सामञ्जस्य की समस्या को ताक पर नहीं रख दिया गया। शिक्षा के केन्द्रीय सलाहकार मंडल ने सन् १६३६ ई० में बुनियादी और माध्यमिक शिक्षा में सामञ्जस्य के प्रश्न पर विचार करके रिपोर्ट देने के लिये एक समिति नियुक्त की। इस समिति की सिफारिश थी कि बुनियादी शिक्षा का पाठ्यक्रम आठ वर्ष हो। इसके प्रथम पाँच वर्ष में प्रारम्भिक (जूनियर) तथा शेष तीन वर्ष में उच्च (सीनियर) कार्यक्रम हो।

भारत सरकार ने १६५२ में इस देश की माध्यमिक शिक्षा के सभी पहलुओं पर जाँच के लिये एक आयोग नियुक्त किया। इसे यह भी निर्देश था कि बुनियादी शिक्षा तथा माध्यमिक शिक्षा का विशेष ध्यान रखते हुए माध्यमिक शिक्षा के सुधार और पुनर्गठन के लिये उपायों का सुझाव पेश करे। आयोग ने सिफारिश की कि बुनियादी, मध्य और निम्न माध्यमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम की रूपरेखा और स्तर प्रायः समान हो जिससे बुनियादी

विद्यालयों के साथ किसी प्रकार का विरोध न हो। अनेक मध्य और निम्न माध्यमिक विद्यालयों के सम्बन्ध में आयोग के प्रस्तावों का ध्येय था कि ११ और १४ वर्ष के सभी बालकों के शिक्षा-जीवन में बुनियादी शिक्षा के प्रमुख सिद्धान्तों का समावेश हो जाये। आयोग की सिफारिश यह भी थी कि माध्यमिक शिक्षा की नव निर्माण व्यवस्था इस प्रकार हो जिसमें प्रारम्भिक या उच्च बुनियादी शिक्षा तीन वर्ष में समाप्त हो और माध्यमिक शिक्षा इसके पश्चात् चार वर्षों में।

आयोग ने इस बात पर विशेष बल दिया है कि बुनियादी और माध्यमिक विद्यालयों में सहसा क्रम भंग न हो। यह स्पष्ट शब्दों में बतलाया गया है कि माध्यमिक विद्यालय पूर्ववत् एकांगी विद्यालय न रहें, किन्तु उनके शिक्षा क्रम में इस प्रकार क. विशेषताएँ हों, जिनमें बुनियादी विद्यालयों के उत्तीर्ण छात्रों की विभिन्न रुचि, और नैपुण्य के विकास का सुअवसर मिले। इनमें सामान्य और व्यावसायिक विषयों का समावेश हो और छात्रों को अपनी आवश्यकता के अनुसार इन्हें चुनने की स्वतंत्रता हो। आयोग की यह भी सिफारिश थी कि माध्यमिक शिक्षा में दस्तकारी एक अनिवार्य विषय रहे, जिससे बुनियादी शिक्षा के बाद माध्यमिक विद्यालय में प्रवेश का मार्ग सरल हो जये, तथा ऐसा करने का यह भी कारण था कि बिना व्यावहारिक कार्य के किसी भी स्तर में शिक्षा अधूरी रह जाती है।

पाठ्यक्रम की विविधता तथा व्यावहारिक और व्यावसायिक शिक्षा पर विशेष बल देने से बुनियादी और माध्यमिक शिक्षा के मध्य खाई भर जायगी क्योंकि व्यावहारिक और बौद्धिक नैपुण्य का विकास साथ साथ होगा।

प्रश्न १०—बुनियादी विद्यालयों के लिये प्रशिक्षित शिक्षकों की नितान्त कमी है। इस दशा में क्या प्रारम्भिक शिक्षा के स्थान में बुनियादी शिक्षा को व्यापक रूप देना सम्भव है?

यह सत्य है कि बुनियादी शिक्षा को व्यापक रूप देने के लिये प्रशिक्षित अध्यापक अभी पर्याप्त संख्या में उपलब्ध नहीं हैं, किन्तु ऐसी बाधाएँ प्रत्येक नये कार्य में उपस्थित होती हैं, और लोग नासमझी से इन्हें स्थायी बाधाएँ समझ लेते हैं। यह बताया गया है कि जिन मैट्रिक पास लोगों को आसानी से नौकरी नहीं मिल पाती, वे बुनियादी विद्यालयों में आसानी से पढ़ाने लगते हैं, यदि उनमें बुनियादी शिक्षण पद्धति को सीखने की इच्छा और राष्ट्रीय अभ्युत्थान के कार्य में उपयोगी सिद्ध होने की उत्सुकता हो।

सरकार जानती है कि अन्य शिक्षा-पद्धतियों की अपेक्षा बुनियादी शिक्षा की सफलता मुख्यतः शिक्षक के विशिष्ट गुणों पर निर्भर है। अतः प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी पूरा करने के लिये प्रयत्न हो रहे हैं और सरकार १९४६-४७ से ही जामिया मिलिया, दिल्ली और शांतिनिकेतन के विनय भवन को बुनियादी विद्यालय के अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिये आर्थिक सहायता दे रही है। इन दोनों संस्थाओं में प्रशिक्षण की अवधि एक वर्ष है, तथा शिक्षण-सिद्धान्त, व्यावहारिक शिक्षण तथा दस्तकारी का प्रशिक्षण दिया जाता है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में भी स्नातकोत्तर प्रशिक्षण कालेज, बुनियादी प्रशिक्षण स्कूल तथा व्यावहारिक प्रदर्शन के लिये स्कूल उच्च बुनियादी विद्यालय खोलने की व्यवस्था है। ये प्रत्येक राज्य के चुने हुए क्षेत्र में खुलेंगे, और अनेक राज्यों में तो ये खुल भी गये हैं। बुनियादी शिक्षा के विस्तार की नयी योजनामें व्यवसाय-शिक्षक, कला शिक्षक तथा बुनियादी विद्यालय शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था है। इस समय शिक्षक-प्रशिक्षण स्कूलों को बुनियादी प्रशिक्षण संस्थाओं में परिणत किया जा रहा है तथा नये प्रशिक्षण कालेज खुलते जा रहे हैं।

इसके अलावा, अनेक राज्यों में बुनियादी स्कूल के शिक्षकों के प्रशिक्षण का अपना अलग कार्यक्रम हैं।

प्रश्न ११— बुनियादी शिक्षण की योजना देश के औद्योगिक विकास को कुटीर-शिल्प के स्तर पर ही रोक देती है, अतः क्या यह योजना प्रतिक्रियावादी नहीं है ?

भारतवर्ष की जनसंख्या सम्भावित संख्या से कहीं अधिक है तथा इसका औद्योगिक विकास निम्न स्तर पर है। ऐसे देशों में छोटे पैमाने के उद्योगों का बहुसंख्यक होना अवश्यम्भावी है, जिसमें इसके सीमित पूंजी सम्बन्धी साधनों का पूरा उपयोग हो सके तथा रोजगार के लिये अधिक से अधिक अवसर मिले। बुनियादी शिक्षा छात्रों को दस्तकारी की शिक्षा देकर उन्हें छोटे उद्योगों की समस्याओं और विशिष्टताओं से परिचित करा देती है, जहाँ कम से कम उनकी रोजी लग जाने की अधिक सम्भावना है। कोई तथाकथित अर्थ शास्त्री ही लघु और कुटीर उद्योगों के बिना नवीन भारतवर्ष की कल्पना कर सकता है। अतः भारतवर्ष के लिये वांछित अर्थव्यवस्था के लिये बुनियादी शिक्षा केवल अनुकूल ही सिद्ध न होगी, किन्तु इसके निर्माण में विशेष सहायक भी सिद्ध होगी।

यहां पर औद्योगीकरण और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के तुलनात्मक गुणों का विवेचन न किया जायेगा। किन्तु यह निःसन्देह कहा जा सकता है कि केवल पुस्तक-ज्ञान की अपेक्षा व्यावहारिक और शारीरिक कार्य द्वारा शिक्षा से सुयोग्य और चतुर कार्यकर्ताओं के पैदा होने की कहीं अधिक सम्भावना है। इसकी सिद्धि परोक्षरूप से भी इस प्रकार होती है कि अमेरिका, रूस और इंग्लैंड के समान अत्यधिक औद्योगीकृत देशों की प्रोजेक्ट-मेथड और ऐक्टीविटी स्कूल सदृश शिक्षण-पद्धतियों ने शिक्षा में व्यावहारिक और उत्पादक कार्य की महत्ता को स्वीकार कर लिया है।

बुनियादी शिक्षा शिल्पकेन्द्रित है, और शिक्षा के माध्यम के लिये दस्तकारी का प्रयोग सब तरह से समुचित शिक्षा का सिद्धान्त समझा गया है। साहित्य-परक क्रियाहीन शिक्षा से अधिकांश छात्रों में शारीरिक श्रम के प्रति घृणा ही उत्पन्न होती है, किन्तु व्यावहारिक हुनर निरीक्षण और सृजनात्मक कार्य में हाथ और चित्त के सुविन्यस्त प्रयोग का प्रशिक्षण, भविष्य के औद्योगिक प्रशिक्षण के लिये अवश्य ही कहीं अच्छी तैयारी है।

भारत के सम्बन्ध में कुछ चुनी हुई पुस्तकें

पुस्तकों के नाम	मूल्य प्रति पुस्तक
	रु० आ०पा०
भारत दर्शन चित्रों में	७– ८– ०
भारतीय कला का सिंहावलोकन	६– ८– ०
स्वाधीनता और उसके बाद	५– ०– ०
भारत की एकता का निर्माण	५– ०– ०
दक्षिण भारत प्रदर्शिका	१– ०– ०
आचार्य विनोबा भावे	०–१२– ०
अस्पृश्यता निवारण	०– ६– ०
हिन्दी साहित्य की नवीन धारायें	०– ६– ०
सूरदास—एक विश्लेषण	०– ६– ०
मानव विज्ञान	०– ४– ०

प्रमुख पुस्तक विक्रेताओं से उपलब्ध

अथवा लिखें

पब्लिकेशन्स डिवीज़न,

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली–८ ।

पब्लिकेशन्स डिवीज़न
सूचना व प्रसार मंत्रालय
ओल्ड सेक्रेटेरिएट, दिल्ली-८

भारत में मुद्रित